मूल्य एवं मूल्यपरक शिक्षा : प्राथमिक शिक्षा एवं शिक्षक के संदर्भ में

अजीत कुमार राय *
मनोज कुमार राय *

शिक्षा केवल कार्यक्षमता को बढ़ाने मात्र का साधन नहीं है। यह जनसाधारण की सहभागिता को व्यापक बनाने तथा व्यक्ति एवं समाज की समग्र गुणवत्ता के उन्नयन का एक प्रभावी उपकरण भी है। जनाधिक्य के कारण सरकार क्षेत्रीय, सामाजिक तथा लैंगिक असमानताओं को दूर करने हेतु शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के संगठित प्रयास करने के लिए वचनबद्ध है, क्योंकि तेजी से बदलते घरेलू एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य को देखते हुए केवल मात्रात्मक विस्तार से वांछित परिणाम नहीं प्राप्त होंगे।

स्कूल शिक्षा का असल उद्देश्य है राष्ट्र निर्माण में मानव क्षमता का भरपूर उपयोग। इसके लिए जरूरी होता है सभी को भरसक एक समान शिक्षा मिले। यही वह मूल कारण है जिसने शिक्षा के प्रति कल्याण की दृष्टि को बदल कर अधिकार आधारित दृष्टिकोण प्रदान किया। इस प्रकार इन चुनौतियों के क्रम में शिक्षा की नींव प्रारम्भिक शिक्षा है जिसमें प्राथमिक एवं उच्चतर प्राथमिक शिक्षा दोनों शामिल हैं। प्रारम्भिक शिक्षा तक सबकी पहुँच हो, इसके लिए बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम–2009, 1 अप्रैल, 2010 से लागू हुआ। नामांकन और हाजिरी बढ़ाने के साथ–साथ बच्चों के स्वास्थ्य स्तर को सुधारने के लिए किए गए प्रमुख उपायों– **'स्कूल में राष्ट्रीय मध्याह्न भोजन'**– कार्यक्रम को भी शामिल किया गया है। **(भारत, 2015, पृष्ठ सं0 244)**

जब हम शिक्षा पर चर्चा कर रहे हैं तो मूल्य उससे अछूता कैसे रह सकता है? मूल्य शिक्षा की आत्मा है और मूल्यपरक शिक्षा का दायित्व सबका है परिवार का भी, विद्यालय का भी और समाज का भी। परिवार और समाज अनौपचारिक मूल्यपरक शिक्षा का दायित्व निभाते हैं, किन्तु शिक्षक के कंधों पर औपचारिक और अनौपचारिक मूल्यपरक शिक्षा का दायित्व है। शिक्षक विद्यार्थी के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, संवेदनात्मक, नैतिक और अध्यात्मिक दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता है। मूल्यपरक शिक्षा के क्रम में शिक्षक की जिम्मेदारी है कि वह विद्यार्थियों को इतना सक्षम बनावे कि छात्र स्वयं मूल्यों की तलाशकर नैतिक निर्णय ले सकें। **(लोढ़ा, 2013 पृ0 13)**

* प्राध्यापक, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

* प्राध्यापक, संस्कृति विद्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा

अब चाहे हम शिक्षा को जन्मजात शक्तियों का विकास करने की प्रक्रिया मानें, वैयक्तिक विकास की प्रक्रिया मानें, सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया मानें या वातावरण के अनुकूलन की प्रक्रिया मानें, इन सभी दृष्टियों से शिक्षा जीवनमूल्यों के साथ गहराई से सम्बद्ध है। यहाँ यह आवश्यक होगा कि मूल्य–परक शिक्षा पर चर्चा से पूर्व **'मूल्य'** क्या है, यह जान लें।

मूल्य

मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत वे मानक होते हैं जो समाज का अंग होने के नाते इकाइयों, व्यक्तियों एवं परिस्थितियों का मूल्यांकन करते हैं। ये मूल्य समाज की रीढ़ होते हैं। ये वे विश्वास होते हैं जिन्हें व्यक्ति किसी दी हुई परिस्थिति में क्रिया करने हेतु चुनता है। कोई आदर्शात्मक, नैतिक अथवा आध्यात्मिक सिद्धांत जो किसी दी हुई परिस्थिति में हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं और जिन पर हमारा व्यवहार आधारित होता है, मूल्य कहलाते हैं। मूल्य, समाज दर समाज एवं समय दर समय बदलते रहते हैं। हमारा जीवन इन मूल्यों के इर्द–गिर्द घूमता रहता है। ये मूल्य सही और गलत के हमारे निर्णय द्वारा ही निर्धारित होते हैं। मूल्य वो अन्तहीन विश्वास होते हैं, जो व्यक्तिगत और सामाजिक रूप से स्वीकृत एक निश्चित व्यवहार को निर्धारित करते हैं। मूल्य की तीन प्रमुख विशेषताएँ होती हैं– (1) ये जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में निर्मित होते हैं और शीघ्रता से परिवर्तित नहीं होते हैं। (2) मूल्य सही और गलत को परिभाषित करते हैं। (3) मूल्य स्वयं को सत्य–असत्य, वैध–अवैध अथवा सही–गलत सिद्ध नहीं करते।

आलपोर्ट (1905) के अनुसार, ''कोई भी साधन जो संतुष्टि उत्पन्न करता है, मूल्य के रूप में पहचाना जाता है।'' **(राव, 2009, पृ0 27–28)** इस प्रकार मूल्य व्यक्ति की पसंद–नापसंद, आवश्यकता, इच्छा एवं संस्कृति द्वारा निर्धारित मानकों को दर्शाते हैं। मानव के दिन–प्रतिदिन के जीवन में उनके व्यवहार एवं क्रियाओं को नियंत्रित एवं मार्गदर्शित करने का कार्य मूल्य ही करते हैं। प्रत्येक शब्द जो हम बोलते हैं, वस्त्र जो पहनते हैं, जिस प्रकार से हम एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया करते हैं, हमारे प्रत्यक्षीकरण आदि में मूल्य प्रदर्शित होते हैं। मूल्य रुचि, विकल्प, आवश्यकता, इच्छा एवं वरीयता के आधार पर निर्मित होते हैं। मूल्य में भावनाओं एवं क्रियाओं के चिंतन, जानने अथवा समझने की प्रक्रिया निहित रहती है। लोगों का व्यवहार हमें उनके मूल्यों को जानने में मदद करता है। किसी व्यक्ति पर किसी प्रकार का दबाव अथवा डर दिखाए बिना किसी निश्चित समय में उसके द्वारा किये जाने वाले व्यवहार अथवा क्रिया के माध्यम से उसके मूल्यों का आकलन किया जा सकता है। सामान्यतः मूल्य व्यक्ति के स्वयं के चयन द्वारा निर्धारित होते हैं। मूल्य मुख्यतः निम्नलिखित तीन आयामों पर आधारित होते हैं। **(कुमार 2009, पृ0 10)**

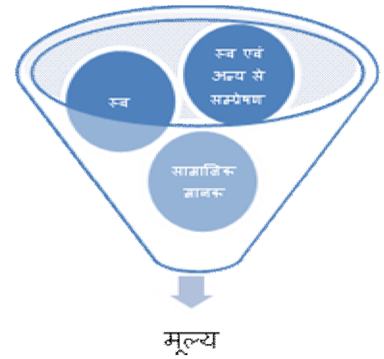

चित्र संख्या 1 : मूल्य के घटक

1. व्यक्ति का आत्म
2. आत्म एवं अन्य व्यक्ति जिनके साथ वे प्रतिदिन अन्तःक्रिया करते हैं।
3. सामाजिक मानक।

मूल्य के प्रकार

मूल्य मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं –

1. यांत्रिक मूल्य जैसे–रुचि, ऐश्वर्य, समृद्धि आदि।
2. आत्मिक मूल्य जैसे–स्वास्थ्य, सम्मान, पवित्रता आदि। (राव, 2009 पृ0 28)

यांत्रिक मूल्य जहाँ विरोधाभास उत्पन्न करते हैं, वहीं आध्यात्मिक मूल्य शांति एवं सहयोग लाते हैं। सन् 1979 में **बी0आर0गोयल** द्वारा 83 मूल्यों की एक सूची बनायी गई। तत्पश्चात **डॉ0 वी0के0 गोकक** ने 1981 में इन मूल्यों को पाँच आधारभूत मानवीय मूल्यों के रूप में वर्गीकृत किया। इस प्रकार ये पाँच मानवीय मूल्य मुख्य मूल्यों की श्रेणी में आते हैं। ये पाँच मानवीय मूल्य हैं– सत्य, अच्छा चरित्र, शांति, प्रेम एवं अहिंसा **(कुमार, 2009 पृ0 17)**

ये पाँच मानवीय अथवा मुख्य मूल्य सार्वभौमिक रूप से सभी धर्मों द्वारा स्वीकार किये जाते हैं परन्तु इनकी तुलना में उपमूल्य अधिक प्रेक्षणीय होते हैं, जबकि मुख्य मूल्य की सही पहचान कर पाना कभी–कभी कठिन हो जाता है क्योंकि कभी–कभी कुछ व्यक्ति इनका दिखावा भी करते हैं, जबकि वास्तव में वे इसे हृदय से अपनाते नहीं हैं।

चित्र सं0 2 : मूल्य के प्रकार

मूल्य शिक्षा

समाज के आदर्शों एवं मूल्यों के अनुरूप व्यक्तियों को संतुष्ट करने एवं एक उत्तम जीवन प्राप्ति हेतु शिक्षा व्यक्ति में मूल्य निर्माण की एक प्रक्रिया है। दार्शनिकों, शिक्षाविदों आदि सभी ने चरित्र निर्माण व अन्तर्निहित गुणों के विकास अथवा समन्वित व्यक्तित्व के विकास हेतु शिक्षा को महत्त्वपूर्ण बताया है। इन मूल्यों के विकास एवं निर्माण हेतु प्राचीन समय से हमारे गुरुकुलों, आश्रमों एवं वर्तमान विद्यालयों में पृथक रूप से मूल्य शिक्षा देने पर जोर दिया जा रहा है।

चित्र सं0 3 : मानवीय मूल्यों का वर्गीकरण

मूल्य शिक्षा शिक्षार्थी के चरित्र एवं व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। यह बालकों में एक निश्चित एवं उपयुक्त समय पर मूल्यों का विकास करती है साथ ही उसमें विद्यमान जन्मजात आत्म–केन्द्रीयता को निःस्वार्थता, अपरिपक्वता को परिपक्वता और बाल्यावस्था को युवावस्था में परिवर्तित कर उन्हें एक मूक श्रोता से एक शक्तिशाली वक्ता में परिवर्तित करती है।

मूल्य शिक्षा व्यक्तित्व के हर पक्ष को ध्यान में रखते हुए बौद्धिक, सामाजिक, भावनात्मक, नैतिक आदि सभी पक्षों के विकास में योगदान देती है। इसमें क्या सही है, क्या अच्छा है या क्या सुन्दर है आदि चुनने की योग्यता विद्यमान रहती है। मूल्यपरक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बौद्धिकता के तीन आयामों– ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक आयामों के विकास से भी जुड़ा हुआ है। इसके द्वारा अधिगमकर्ता न केवल सही और अच्छे के बारे में जानता है बल्कि सही क्रियायें करने की दिशा में उपयुक्त भाव एवं वचनबद्धता का अनुभव करता है। यह व्यक्तिगत एवं मानवता से जुड़े ज्वलंत मुद्दों पर समालोचनात्मक चिंतन एवं स्वतंत्र निर्णय की योग्यता विकसित करने वाली प्रक्रिया है।

इस प्रकार मूल्य शिक्षा उत्तम मूल्य एवं चरित्र का विकास करने का उद्देश्य लिए हुए नियोजित शैक्षिक क्रियाओं से युक्त कार्यक्रम है। हमारी प्रत्येक क्रिया और विचार हमारे मस्तिष्क पर एक छाप छोड़ते हैं और यह छाप अथवा भाव ही किसी दिए हुए समय अथवा परिस्थिति में हमारी प्रतिक्रियाएँ एवं व्यवहार निर्धारित करते हैं। इन व्यवहारों एवं प्रतिक्रियाओं का मिला–जुला रूप हमारे चरित्र को निर्मित एवं निर्धारित करता है। इन व्यवहारों एवं प्रतिक्रियाओं को परिमार्जित करते हुए चरित्र निर्माण प्रक्रिया को एक नई दिशा प्रदान करना ही मूल्य शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। भारतीय संविधान द्वारा भी प्रस्तावना के अन्तर्गत चार सार्वभौमिक मूल्यों का वर्णन किया गया है जो मूल्य शिक्षा को महत्ता प्रदान करते हैं। ये मूल्य निम्नलिखित हैं–

1. स्वतंत्र-विचारों, विश्वासों, आदर्शों, भावनाओं को व्यक्त करने की स्वतंत्रता।
2. समान अवसरों की समानता।
3. बन्धुत्व–व्यक्ति का सम्मान बनाये रखते हुए सम्पूर्ण राष्ट्र की एकता बनाये रखना।
4. न्याय–सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक किसी भी स्तर पर किसी भी वर्ग के साथ अन्याय ना होने देना एवं एक व्यक्ति की स्वतंत्रता को दूसरे के मार्ग में बाधक न बनने देना।

इसके अतिरिक्त संविधान के अनुच्छेद 36 से 51 तक प्रदत्त मूल अधिकार एवं अनुच्छेद 51(ए) में प्रदत्त मूल कर्तव्य भी राष्ट्रीय मूल्यों को प्रदर्शित करते हैं जो कहीं न कहीं मुख्य अथवा उपमूल्यों के ही रूप हैं। एक निश्चित एवं सही दिशा प्रदान करना ही मूल्य शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है।

भारत में समय–समय पर गठित विभिन्न आयोगों एवं समितियों की रिपोर्टों में भी मूल्य शिक्षा प्रदान करने पर विशेष जोर दिया जाता रहा है।

स्वतंत्रता के पश्चात गठित सर्वप्रथम आयोग, **राधाकृष्णन आयोग (1948–49)** ने मूल्य शिक्षा देने पर जोर दिया। आयोग ने विद्यालयों के साथ–साथ विश्वविद्यालयों, कालेजों एवं महाविद्यालयों में प्रातःकाल प्रार्थना सभा करने पर जोर दिया, साथ ही विभिन्न महापुरुषों के विचारों को पढ़ाने पर जोर दिया। (एन0सी0ई0आर0टी0, 2012, पृ02) **मुदालियर कमीशन (1952–53)** ने चरित्र निर्माण को शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित करते हुए स्पष्ट किया कि शैक्षिक प्रक्रिया का अंतिम लक्ष्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व एवं चरित्र का इस प्रकार प्रशिक्षण करना हो ताकि वे अपनी समस्त कुशलताओं को पहचानने योग्य बन सकें और समुदाय की अच्छाई में अपनी योग्यताओं के माध्यम से अपना योगदान दे सकें।

कोठारी आयोग (1964–66) ने **''शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास''** पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हमारे पाठ्यक्रमों में सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्य शिक्षा की कमी परिलक्षित होती है। आयोग ने इन मूल्यों की शिक्षा हेतु महान धर्मों के नैतिक मूल्य एवं शिक्षाओं को जानने एवं सीखने का मार्ग दिखाया, साथ ही **श्रीप्रकाश आयोग** के सुझाव **''प्रत्यक्ष नैतिक अनुदेशन''** पर सहमति जतायी, जिसके अनुसार विद्यालयी शिक्षा में सप्ताह में एक या दो कालांश नैतिक शिक्षा के लिए होने चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने आवश्यक मूल्यों के ह्रास और समाज में बढ़ती स्वार्थपरकता की ओर ध्यान आकर्षित किया। इसमें सामाजिक और नैतिक मूल्यों के उत्पादन हेतु शिक्षा को शक्तिशाली यन्त्र की रूप में प्रयोग करने पर जोर दिया गया, साथ ही स्पष्ट किया गया कि शिक्षा द्वारा अपने लोगों में एकता और बन्धुत्व को बढ़ाने हेतु सार्वभौमिक एवं कभी समाप्त न होने वाले मूल्यों का विकास करना चाहिए। **शिक्षा नीति की कार्ययोजना (पी0ओ0ए0, 1992)** में विद्यालयी शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर मूल्य शिक्षा के विभिन्न अवयवों को समन्वित करने का प्रयास किया गया है।

विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2000) में विद्यालयी पाठ्यक्रमों में मूल्य शिक्षा को समन्वित करने पर जोर दिया गया। एकता एवं बन्धुत्व को बढ़ाने हेतु विद्यालयों द्वारा सार्वभौमिक मूल्यों की शिक्षा देने पर ज़ोर दिया गया, साथ ही स्पष्ट किया गया कि संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए ताकि देश के बालक एवं बालिकाएँ अच्छा देखें, अच्छा करें एवं अच्छी वस्तुओं से प्रेम करें और पारस्परिक सहयोग के साथ जीवन निर्वाह करने वाले नागरिक बनें।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, (2005) में भी स्पष्ट किया गया कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि विद्यालय की प्रत्येक क्रिया में मूल्य निर्माण की झलक दिखाई दे। पाठ्यचर्या में भिन्नता में एकता एवं मानवों के बीच पारस्परिक स्वतंत्रता के प्रति हमारी वचनबद्धता को मजबूत करने पर बल दिया गया जो कि मूल्यों का विकास कर एक बहुसांस्कृतिक समाज में शांति, मानवता, सहनशीलता आदि गुणों का विकास कर सके।

चित्र संख्या 4 : शिक्षा में मूल्य पर ऐतिहासिक दृष्टि

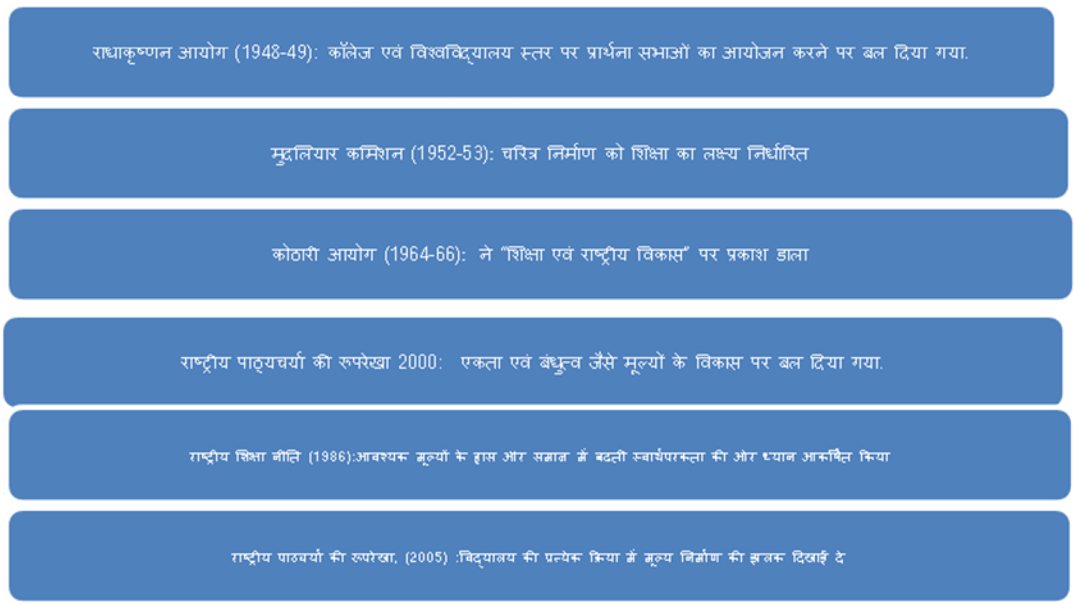

इस प्रकार केवल दार्शनिकों एवं शिक्षाविदों द्वारा ही नहीं बल्कि सरकार द्वारा भी भारतीय शिक्षा प्रणाली में मूल्यों के विकास हेतु मूल्य शिक्षा प्रदान करने पर ज़ोर दिया जाता रहा है।

प्राथमिक शिक्षा

अपने प्रारंभिक दौर में प्राथमिक शिक्षा का केंद्र गुरुकुल अथवा आश्रम हुआ करते थे। आज प्रारंभिक शिक्षा की जिम्मेदारी सरकार की है। शिक्षा के अनिवार्य कानून (2009) का 1 अप्रैल, 2010 से लागू हो जाने से 6–14 आयु वर्ग के बालक एवं बालिकाओं की शिक्षा अब मुफ्त हो गई है। और तो और अब उन्हें दोपहर का भोजन, ड्रेस, किताबें, बैग, जूते सब कुछ निःशुल्क दिया जा रहा है। विद्यालयों की संख्या और शिक्षक–छात्र अनुपात में भी सुधार आया है। जहाँ प्राथमिक स्तर पर इन बच्चों को हिंदी, गणित, कला, सामाजिक विज्ञान की शिक्षा दी जाती है, वहीं विद्यालयों में दी जाने वाली

शिक्षा के अन्तर्गत मूल्य शिक्षा पर भी विशेष जोर दिया जा रहा है। चूंकि समाज में मूल्यों का विशेष स्थान है और विद्यालय समाज का लघु रूप है, इसलिए सामाजिक जीवन जीने के लिए मूल्य अत्यंत आवश्यक हैं किन्तु आज के भौतिकवादी युग में जहाँ स्वार्थपरता, लोभ, ईर्ष्या आदि का बोलबाला है, ऐसे समाज में इन बुराइयों से अछूता रहना एक चुनौती है। ऐसी स्थिति में शिक्षकों का यह दायित्व हो जाता है कि वे विद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थियों में मूल्यों का विकास प्रारंभिक शिक्षा से ही शुरू करें ताकि विद्यालय से निकलने वाले विद्यार्थी एक सभ्य एवं जिम्मेदार नागरिक बनकर देश की सेवा करें।

मूल्य निर्धारण में विद्यालय शिक्षक की भूमिका

मूल्यों पर थोथी व्याख्या देकर मूल्यों का विकास नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार तैरना सिखाने के लिए प्रशिक्षक को स्वयं पानी में उतर कर तैराकी सिखानी पड़ती है, उसी प्रकार मूल्य शिक्षा प्रदान करने वाले शिक्षक में यह योग्यता होनी चाहिए कि वह विद्यार्थियों को जीवन–जल में उतरने और अपने मूल्यों द्वारा उनका सामना करने हेतु स्वयं के व्यवहार द्वारा प्रेरित करें। उनमें प्रयोगात्मक योग्यताओं का विकास करें जिससे विद्यार्थी जीवन की प्रत्येक परिस्थिति के लिए तैयार रहें।

निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से शिक्षक अपने विद्यार्थियों में मूल्य का प्रसार कर सकता है–

(I) विद्यार्थियों को प्रेरित करके

शिक्षक अपने विद्यार्थियों के लिए आदर्श होता है। अतः शिक्षकों को अपने व्यवहार, विचार आदि के माध्यम से विद्यार्थियों को प्रेरणा प्रदान करनी चाहिए, जिससे वे जीवन की प्रत्येक परिस्थिति का सामना कर सकें और अपने उदीयमान भविष्य का निर्माण कर सकें।

(II) महापुरुषों की जीवनियों द्वारा उदाहरण प्रस्तुत करना

शिक्षक अपने विद्यार्थियों को महापुरुषों के विचार एवं आचरण को आत्मसात करने के लिए प्रेरित करें।

(III) विभिन्न नैतिक गुणों का विकास करना

विद्यालयी शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों में शांति, प्रेम, धर्मनिरपेक्षता, एकता, सहयोग, सांस्कृतिक, संवर्धन, सृजनात्मकता, राष्ट्रीय एकता एवं बन्धुत्व आदि गुणों के विकास हेतु निरंतर प्रयास करते रहना चाहि।

(IV) शिक्षार्थियों को उत्पादक एवं सृजनात्मक क्रियाओं में संलग्न करना

विद्यालय के शिक्षकों को सतही ज्ञान से हटकर मूलभूत आदर्शों, मूल्यों हेतु अपने विद्यार्थियों के अंतर्निहित गुणों–अवगुणों का ज्ञान प्राप्त कर उन्हें सृजनात्मक एवं उत्पादक क्रियाओं में संलग्न करना चाहिए।

(V) पाठ्येतर क्रियाओं पर बल

विद्यालयों में पाठ्यक्रम का पूर्ण ज्ञान देने के साथ–साथ पाठ्येतर क्रियाओं जैसे समूह कार्य, हस्तकौशल आदि का भी प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए।

(VI) आत्म–सम्मान का भाव विकसित करना

विद्यालयी शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों के व्यक्तिगत गुणों का सम्मान करते हुए उनमें आत्म–सम्मान व आत्म–प्रकाशन के भाव विकसित करने चाहिए। इसके लिए उन्हें अपने विद्यार्थियों को हीनदृष्टि से न देखते हुए उन्हें श्रेष्ठता प्रदान करनी चाहिए।

(VII) अपने विचार प्रकट करने के अवसर देना

शिक्षक को विद्यार्थियों के स्वानुभव प्रकट करने के अवसर प्रदान करना चाहिए। इस हेतु सप्ताह में एक दिन के क्रियाकलाप ऐसे हों जिनमें विद्यार्थी अपने विचार प्रकट करें।

(VIII) शिक्षकों द्वारा पूर्ण समर्पण भाव से शिक्षा देना

शिक्षक को पूर्ण समर्पण भाव से विद्यार्थियों को शिक्षित करना चाहिए और उनके अन्तर्निहित गुणों को उजागर करते हुए उनका मार्गदर्शन करना चाहिए।

(IX) अनुशासन बनाये रखना

अनुशासनहीन छात्रों को केवल दण्डित नहीं करना चाहिए, बल्कि उनकी योग्यता को जानकर उन्हें अन्य सृजनात्मक क्रियाओं में संलग्न किया जाए ताकि उनके नकारात्मक व्यवहारों को पनपने का अवसर न मिल पाए।

(X) पूर्ण मनुष्य बनने की शिक्षा

विद्यालय में शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों के शारीरिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक, बौद्धिक विकास द्वारा उनको पूर्ण मानव बनाने का प्रयास किया जाए। प्राथमिक स्तर पर शिक्षक इन्द्रधनुष के सात रंगों की भाँति अपने व्यक्तित्व में इन सात गुणों के रंग को भरते हुए मूल्यपरक शिक्षा के उद्देश्यों को अपनी कक्षा में प्राप्त कर सकता है।

निम्न मुख्य बिन्दुओं पर ध्यान देते हुए हम मूल्य शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त कर सकते हैं–

चित्र संख्या–5 शिक्षक के गुण

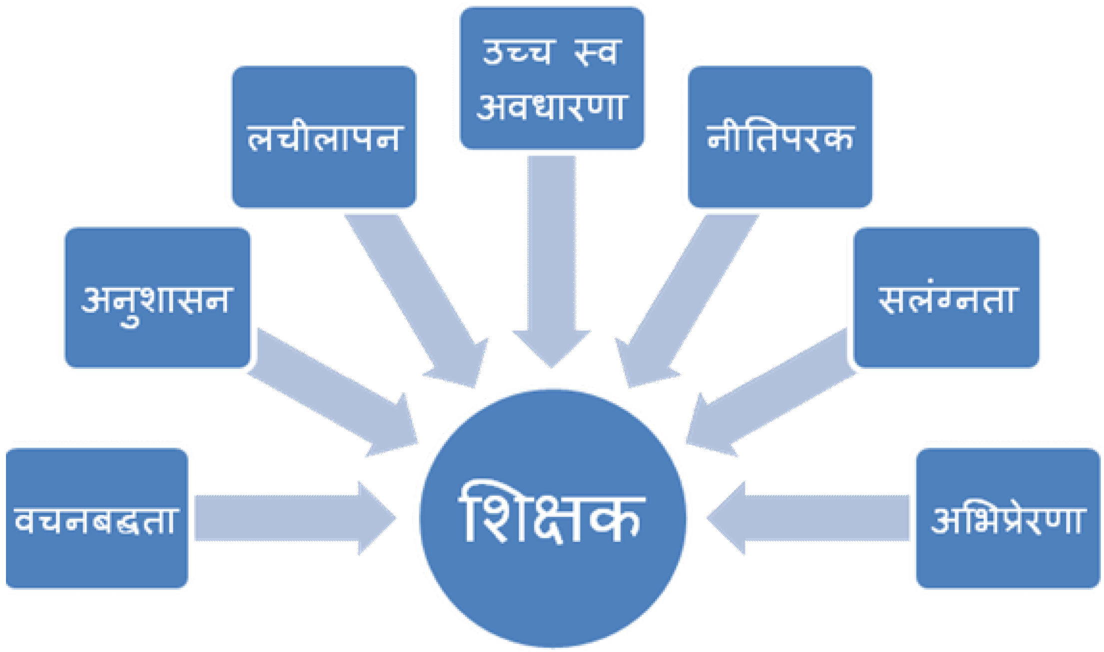

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि मूल्य निर्माण प्रक्रिया में शिक्षा का महत्त्वपूर्ण योगदान है। बालक के प्रारंभिक जीवन में ही इसकी नींव तैयार करनी होती है। इस निर्माण प्रक्रिया के मुख्य पात्र के रूप में घर, विद्यालय, पड़ोस, खेल साथी होते हैं। इसमें भी असली भूमिका परिवार और विद्यालय ही निभाते हैं। मूल्य निर्माण की इस पुनीत प्रक्रिया का निर्वहन घर में परिवार के सदस्य तो विद्यालय में शिक्षक निभाते हैं। विभिन्न प्रकार के सम्प्रेषण एवं विद्यार्थियों में मूल्य विकास में विद्यालयी शिक्षकों की भूमिका बढ़ जाती है। अतः विद्यालयी शिक्षकों की जिम्मेदारी न केवल शिक्षा प्रदान करने में है बल्कि विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण, विभिन्न नैतिक मूल्यों के विकास की दृष्टि से उनकी भूमिका काफ़ी महत्त्वपूर्ण हो जाती है। विद्यालयों से निकलने वाले छात्र राष्ट्र के कुशल एवं जिम्मेदार नागरिक बन

सकें और भारत वर्ष को पुनः उसकी खोई प्रतिष्ठा अर्जित करा सकें, यही 'मूल्य परक शिक्षा' का अभीष्ट है।

संदर्भ ग्रन्थ –

- सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय (2015), भारतः वार्षिक संदर्भ ग्रन्थ, नई दिल्लीः प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय।
- लोढ़ा, महावीरमल (2013), नैतिक शिक्षाः विविध आयाम, हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
- भासकराचार्युल, वाई एंड राव, डी.पुल्ला (2009), द रोल ऑफ टीचर्स इन स्ट्रेंथनिंग वैल्यू एजुकेशन।
- थामसकुट्टी, पी.जी.एंड जार्ज, मैरी (एड). ह्यूमन राइट्स एंस वैल्यू इन एजुकेशन, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि., नई दिल्ली।
- कुमार सतीश (2009), इन्कलेकशन ऑफ़ ह्यूमन वेल्यूज इन एजुकेशन,
- एन.सी.ई.आर.टी. (2012), एजुकेशन फॉर वैल्यूज इन स्कूल्स–ए फ्रेमवर्क, नई दिल्ली।